ज्ञान की कहानियां

सन्तराम वत्स्य

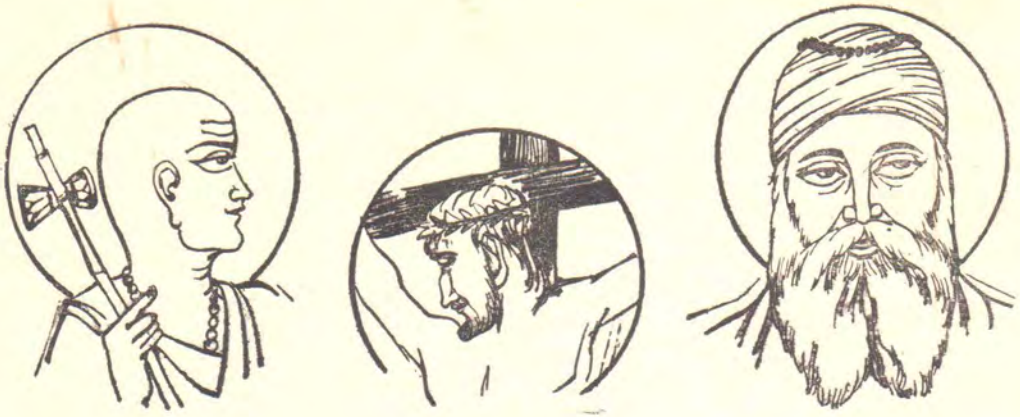

ज्ञान की कहानियां

सन्तराम वत्स्य

विद्यार्थी प्रकाशन, दिल्ली

प्रथम संस्करण : १९७४

मूल्य : दो रुपये

प्रकाशक : विद्यार्थी प्रकाशन
के-७१, कृष्णानगर
दिल्ली-११००५१

मुद्रक : भारती प्रिंटर्स, दिल्ली-११००३२

दो शब्द

कथाओं के द्वारा धार्मिक शिक्षा, नैतिक शिक्षा और राजनीति की शिक्षा देने की परम्परा भारत में बहुत पुरानी है।

पुराण, जातक कथाएं, पंचतंत्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थ इसी उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। हमारे देश के सन्त, महात्मा और आचार्य भी ज्ञान की गूढ़ बातों को दृष्टान्तों द्वारा जनसाधारण को समझाने में सफल हुए हैं।

इधर धर्मनिरपेक्षता का अर्थ धर्महीनता कर दिए जाने से जो अनर्थ हुआ है, उसका परिणाम हमारे सामने है। रही-सही कमी को हत्या, डकैती और जासूसी उपन्यासों ने पूरा कर दिया है। घटिया फिल्मों ने भी हमारे जन-मानस को बिगाड़ने में बहुत सहायता की है।

इन सारे धक्कों को झेलने के लिए सुदृढ़ चरित्र की आवश्यकता है। यद्यपि चरित्र मूलतः घर, पाठशाला और समाज के परिवेश में ही निर्मित होता है पर सत्साहित्य भी चरित्र-निर्माण का महत्त्वपूर्ण घटक है।

सद्गुणों के विकास की प्रेरणा देना सदा ही महत्त्वपूर्ण कार्य रहा है। आज इसका महत्त्व और भी अधिक है। ये कहानियां इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रस्तुत की जा रही हैं।

इनकी भाषा सरल सुबोध है। ये बिना किसी की सहायता के पढ़ी जा सकती हैं। रेखाचित्रों ने इन्हें और भी प्रभावपूर्ण बना दिया है।

आशा है कि ये कहानियां चाव से पढ़ी जाएंगी और वांछित प्रभाव डालेंगी।

—लेखक

क्रम

भगवान् की पहचान	५
हम दूसरों के काम आएं	११
राह के रोड़े	१४
युधिष्ठिर की अग्नि परीक्षा	१९
बड़ा कौन ?	२६
सदाचार की परीक्षा	३०

भगवान् की पहचान

एक थे काज़ीजी। अच्छे-खासे पढ़े-लिखे आदमी थे। सोचा कि बादशाह के पास चलें। शायद कुछ काम बन जाए। चल पड़े बादशाह के पास। जब वे दरबार में पहुंचे तो सब दरबारी उनका रोबदार चेहरा, छाती तक लम्बी दाढ़ी, तीखी नोकीली मूंछें देखकर कनखियों से एक-दूसरे की ओर देखने लगे। काज़ी जी ने इधर-उधर की कितनी ही बातें बादशाह को बताईं। बादशाह ने उन्हें अपने दरबार में रख लिया। उनका बड़ा आदर-सत्कार होने लगा।

सब जानते हैं कि पढ़े-लिखे लोगों में एक भारी अवगुण होता है। वे किसी दूसरे पढ़े-लिखे का आदर होता देख नहीं सकते। फिर इस दरबार के पुराने काज़ी साहब ही क्यों मन-मसोसकर बैठे रहते! उन्होंने बादशाह को उकसाया।

बोले, "जहांपनाह, इस तरह नए आदमी को बिना उसकी परीक्षा लिए दरबार में रखना ठीक नहीं। कौन जाने किसी दुश्मन का जासूस हो ? बातें तो बहुत बनाता है। परीक्षा लीजिए तो पता लग जाएगा कि कितने पानी में है।"

बादशाह को बात जंच गई। बोले—"बताओ तो क्या परीक्षा लें ?"

पुराने काज़ी ने सोचकर कहा—"बादशाह सलामत, उस बातूनी से तीन बातें पूछिए। पहली तो यह कि भगवान् देखता किस ओर है ? दूसरी यह कि वह रहता कहां है ? और तीसरी यह कि वह काम क्या करता है ? अगर इन बातों का उसने ठीक-ठीक उत्तर दे दिया तो आदमी सच्चा और समझदार है, नहीं तो दाल में जरूर कुछ काला है।"

दूसरे दिन काज़ी जब दरबार में पहुंचा तो बादशाह ने पूछा—"काज़ी साहब, भगवान् देखता किस ओर है ? वह रहता कहां है ? और काम क्या करता है ?"

आज तक काज़ी साहब बादशाह की तारीफ के पुल बांधकर, चापलूसी करके उन्हें प्रसन्न करते रहे थे। आज यह सवाल सुने तो पैरों के नीचे की मिट्टी खिसक गई। कुछ देर सोचने के बाद जब उन्हें कोई उत्तर न सूझा तो कहने लगे—"बादशाह सलामत, आपके सवाल का जवाब देने के लिए मुझे सात दिन की छुट्टी मिलनी चाहिए ताकि पूरी तरह सोच-समझकर जवाब दूं।"

बादशाह ने सात दिन की छुट्टी दे दी।

काज़ी बेचारा छः दिन तक सोचता रहा, किन्तु कुछ समझ में न आया कि क्या जवाब दे। कभी कुरान के पन्ने उलटता तो कभी किसी दूसरी किताब के। सोचते-सोचते सातवां और आखिरी दिन आ पहुंचा। काज़ी ने सोचा—बीमारी का बहाना करके कुछ दिन की और छुट्टी ले लूं। शायद तब तक कोई जवाब सूझ जाए।

काज़ी का एक नौकर था पाजी। वह पिछले सात दिनों से देख रहा था कि मालिक उदास हैं। पर मामला उसकी समझ में न आता था। आज उसने

काजी से पूछ ही लिया कि वे उदास क्यों हैं ? काज़ी ने उसे दुत्कार दिया। कहने लगे—"भाग यहां से, मुझे तंग मत कर। अब मेरी मौत का दिन नजदीक है।"

पाजी सच्चा सेवक था। मालिक का दुःख उसका दुःख था। उसने फिर हाथ जोड़कर पूछा—"मालिक, अगर मैं अपनी जान देकर भी आपको बचा सका तो बचाऊंगा। आप एक बार मुझे बताइए तो सही कि बात क्या है ?"

काज़ी ने लम्बी सांस लेकर कहा, "वह बात तेरे बस की नहीं है। तू जा, अपना काम कर।"

काज़ी की बात से पाजी को यह पता तो लग ही गया कि मालिक पर कोई ऐसी मुसीबत आ पड़ी है, जो टल नहीं रही है और मालिक मुझे इसके काबिल भी नहीं समझते कि यह बात मुझे बताएं। पर वह तो अच्छा और सच्चा नौकर था। बोला, "जब तक आप मुझे यह नहीं बताएंगे कि आप पर क्या मुसीबत आ पड़ी है, मैं यहां से नहीं खिसकूंगा। मैं पढ़ा-लिखा न सही पर नौकर तो पढ़े-लिखे मालिक का हूं। क्या मालूम कोई तरकीब सूझ जाए।"

काज़ी ने सोचा, "यह बिना सारी बात जाने नहीं टलेगा। इसलिए बादशाह के पूछे हुए तीनों सवाल बता दिए।"

सवाल सुनकर पाजी ने कहा, "मलिक, आप चिन्ता मत कीजिए। मैं शाही दरबार में चलूंगा। आप बादशाह से कह दीजिएगा कि इन सवालों का जवाब मेरा नौकर देगा।"

काज़ी ने कहा, "तू कहता क्या है ! तू इन सवालों के जवाब देगा ! मैं ही सात दिन से चक्कर में पड़ा हुआ हूं। कुछ अता-पता नहीं लग रहा है और तू बादशाह को जवाब देगा ! वैसे ही मैं मुसीबत में पड़ा हुआ हूं, तू उल्टे-सुल्टे जवाब देकर और मेरी भद करवाएगा।"

पाजी बोला, "मालिक, मेरी बात पर भरोसा कीजिए। बादशाह आप पर खुश होंगे। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि सारे सवालों का ठीक-ठीक

जवाब दूंगा।"

आखिर काज़ी को उसकी बात माननी पड़ी। वह पाजी को साथ ले दरबार में जा पहुंचा।

जब दरबार भर गया तो बादशाह ने काज़ी को अपने सवालों के जवाब बताने को कहा।

काज़ी बोला, "बादशाह सलामत ! आपके सवालों के जवाब मेरा यह नौकर, पाजी देगा।"

बादशाह ने पाजी को आगे बढ़कर जवाब देने के लिए कहा।

पाजी बोला, "बादशाह सलामत ! मैं आपके सवालों का जवाब देने के लिए तैयार हूं। पर बात यह है कि सवाल पूछने वाले से जवाब देने वाले का दर्जा बड़ा होता है। इसलिए जहां आप बैठे हैं, वहां मुझे बिठाइए और आप खुद उससे कुछ नीचे बैठिए।"

बादशाह को लगा कि यह बात तो ठीक ही कह रहा है। उन्होंने उसे शाही तख्त पर बिठाया और खुद उससे कुछ नीचे बैठा।

पाजी बोला, "बादशाह सलामत ! अब आप अपने सवाल पूछ सकते हैं।"

बादशाह ने पहला सवाल पूछा, "भगवान् देखता किस ओर है ?"

पाजी बोला, "एक दीपक मंगवाइए।"

तुरंत एक जलता हुआ दीपक लाया गया। पाजी ने पूछा—"इसका प्रकाश किस दिशा की ओर है।" उत्तर मिला—"सब ओर।" उसने कहा—"ठीक इसी तरह ईश्वर भी सब ओर देखता है, किसी एक ओर नहीं। वह प्रत्येक मनुष्य के हृदय में एक ज्योति के समान विराजमान् है और चारों ओर अपना प्रकाश बिखेरता है।"

बात इतने अच्छे ढंग से समझाई गई थी कि बादशाह को जँच गई। अब बादशाह ने दूसरा सवाल पूछा—"भगवान् रहता कहां है ?"

पाजी ने कहा—"दूध देने वाली एक गाय मंगाइए।" नौकर झट एक गाय

ले आया। तब उसने पूछा—"क्या गाय में दूध है ?"

बादशाह ने कहा—"हां।"

पाजी के कहने पर गाय बाहर भिजवा दी गई। उसने कुछ दूध मंगाया। दूध लाया गया। पाजी ने बादशाह से पूछा—"इसमें मक्खन कहां है ?" "सारे दूध में मक्खन है।" बादशाह ने कहा। तब पाजी ने समझाया कि "जैसे दूध की हर बूंद में मक्खन समाया हुआ है, वैसे ही ईश्वर भी सब जगह है। जैसे गाय में दूध या दूध में मक्खन।" अब पाजी ने बादशाह से पूछा—"बादशाह सलामत ! क्या आपको अपने सवाल का जवाब मिल गया ?" बादशाह ने

कहा—"हां, मिल गया।" वे लोग जो बादशाह से कहा करते थे कि ईश्वर सातवें आसमान पर रहता है। बादशाह की नजरों में गिर गए।

अब बादशाह ने अपना तीसरा सवाल पूछा—"ईश्वर करता क्या है ?"

पाजी ने कहा—"दो मिनट ठहरिये, इसका भी जवाब दिए देता हूं। अभी नौकर भेजकर काज़ी को बुला दीजिए।"

जब काज़ी को बादशाह का बुलावा मिला, तो मारे डर के होश गुम हो गए। किन्तु करता क्या ! बादशाह का हुक्म जो ठहरा।

काजी ने दरबार में आकर देखा कि पाजी बादशाह के तख्त पर बैठा है ! उसे बड़ी हैरानी हुई। पाजी ने अपने मालिक काज़ी को उस जगह बैठने को कहा जहां पहले काज़ी का नौकर, यह पाजी बैठता था। बादशाह को कहा कि उस जगह बैठ जाइए, जहां पहले काज़ी बैठता था। आप तो वह शाही तख्त पर बैठा हुआ था ही। अब उसने बादशाह को समझाते हुए कहा—"देखिए बादशाह सलामत ईश्वर का यही काम है। वह प्रत्येक वस्तु को बदलता रहता है। उसने पाजी को बादशाह, बादशाह को काज़ी और काज़ी को पाजी बनाया।"

सारे दरबारी, बादशाह और स्वयं काज़ी भी उस पाजी की इस बात पर हंस पड़े। बादशाह उसके जवाब से बहुत प्रसन्न हुआ और उसने उसे बहुत-सा इनाम दिया।

हम दूसरों के काम आएं

हज़ार-बारह सौ साल पहले की बात है। अरबों और रूमियों में लड़ाई छिड़ गई। रोज़ दोनों ओर के सैकड़ों सिपाही मरते। हज़ारों घायल होते। दिन भर घमासान लड़ाई होती, पर दिन छिपते ही रुक जाती।

एक दिन जब शाम को लड़ाई बन्द हुई, तो अरबों का एक सिपाही अपने घर नहीं पहुंचा। घर वाले समझ गए कि अब तक नहीं आया, तो जरूर लड़ाई में कट मरा होगा। उसका एक भाई उसकी लाश को ढूंढ़ने निकला। वह चाहता था कि यदि लाश मिल जाए, तो उसे कबर में दफना दे और अगर कहीं घायल हुआ पड़ा हो तो उसे घर लाकर उसका इलाज किया जाए। उसने सोचा—शायद वह पानी के लिए तड़प रहा हो। वह अपने साथ लोटा-भर पानी भी लेता

गया।

वह लड़ाई के मैदान में पहुंचा। वहां कितनी ही लाशें पड़ी थीं। बहुत से सिपाही घायल पड़े तड़प रहे थे। वह लालटेन लिए देखता जा रहा था। उसका भाई उसे मिल गया। सचमुच ही वह पानी के लिए तड़प रहा था। उसके घाव बहुत गहरे थे और बचने की आशा बहुत कम थी।

भाई उसे पानी पिलाने को तैयार हुआ। इतने में किसी दूसरे घायल की 'पानी-पानी' की पुकार सुनाई दी।

उस दयालु ने अपने भाई से कहा—"पहले उस घायल को पानी पिला आओ। फिर मुझे पिलाना।"

जिस ओर से आवाज़ आ रही थी, हाथ में पानी का लोटा लिए यह भाई जल्दी से वहां पहुंचा।

यह एक घायल सरदार था। पता नहीं कब से पानी के लिए तड़प रहा था। अरब उसे पानी पिलाने को तैयार हुआ। सरदार ने भी अपना मुंह खोला कि पानी पिए किन्तु इतने में तीसरी ओर से 'पानी-पानी'की आवाज़ सुनाई दी।

यह सरदार भी पहले सिपाही से कम परोपकारी नहीं था। उसने आवाज़ सुनते ही पानी के लिए खोला हुआ अपना मुंह बन्द कर लिया। उसने आंख के इशारे से और हाथ से पानी वाले भाई को समझाया कि जहां से आवाज़ आई है, पहले वहां जाकर पानी पिला आओ।

लम्बी-गहरी सांस छोड़ते हुए यह भाई लोटे को उठाकर, जहां से आवाज़ आई थी, उस ओर दौड़ पड़ा। पर उसके पहुंचने तक यह घायल दम तोड़ चुका था।

पानी वाला भाई फिर घायल सरदार के पास पहुंचा। पर देखता क्या है कि उसके सांस भी पूरे हो चुके हैं। दुःखित दिल से खुदा को मन ही मन याद करता हुआ वह फिर अपने भाई के पास पहुंचा। देखा तो उसके प्राण-पखेरू भी

उड़ चुके थे।

इन तीनों घायलों में से, जो कि पानी के लिए तड़प रहे थे, किसी ने भी पानी न पिया। परन्तु पहले दो अपने को सदा-सदा के लिए अमर कर गए।

जब कभी जीवन में हमारे सामने ऐसा कठिन अवसर आए—दूसरों के जीवन के लिए हमें अपना जीवन देना पड़े—तो हम इसी तरह हंसते-हंसते दे सकें।

राह के रोड़े

बात ज़रा पुरानी है। चतुरसेन नाम का एक बड़ा ही धर्मात्मा और न्यायकारी राजा था। सारी प्रजा उसे मन से चाहती थी। उसके राज में कोई निर्धन न था, भिखमंगे को तो बात ही छोड़ो। कभी अकाल न पड़ता। खूब

फसल होती। फल भी खूब होते। कपड़े-लत्ते की भा कमी न थी। लोग कहते कि यही 'रामराज्य' है।

थोड़ी-सी मेहनत-मज़दूरी करने से ही ज़रूरत की सब चीज़ें मिल जाती थीं। धीरे-धीरे लोग आलसी बनने लगे। मेहनत से जी चुराने लगे। सारे राज-कर्मचारी आलसी बन गए। राजा ने देखा—राज-काज ठीक समय पर नहीं होते। राजा के जी में आया कि देखूं, प्रजा का क्या हाल है? क्या वह भी आलसी बन गई है?"

उसी दिन शाम को राजा वेश बदलकर घूमने निकला। वह अभी महल से थोड़ी ही दूर निकला था कि पांव में जोर की ठोकर लगी। खून बहने लगा। राजा ने देखा कि सड़क पर पत्थर पड़ा है। उसने उसे रास्ते से उठाकर दूर फेंक दिया।

राजा आगे बढ़ा। देखा कि सड़क पर जगह-जगह पत्थर पड़े हैं। कई जगह सड़क में गढ़े पड़ गए हैं। आने-जाने वालों को खूब ठोकरें लगतीं। पर इन पत्थरों को कोई न उठाता। हां, पत्थर फेंकने वाले के नाम एक-दो गालियां जरूर ही निकाल देता। पता नहीं ठोकरें खाते-खाते कितनों के पैरों से खून बहा होगा? गिरने से कितनों के सिर फूट गए होंगे? पर क्या मजाल जो किसीने एक भी पत्थर रास्ते से हटाया हो। सबका एक ही ढंग था। पत्थर फेंकने वाले को दो-चार गालियां निकालता और आगे चल देता।

राजा ने प्रजा की जब यह हालत देखी तो बहुत दुःखित हुआ। उसने मन में सोचा—सभी एक-दूसरे को दोषी ठहराते हैं। किसी में इतनी हिम्मत नहीं कि इन राह के रोड़ों को उठाकर दूर फेंक दे।

राजा को घूमते-घूमते रात हो गई। सड़क पर लोगों का आना-जाना बन्द हो गया। राजा ने देखा कि एक जगह सड़क में गढ़ा पड़ गया है। पास ही पत्थर भी पड़े हुए हैं। उसने रुपयों की एक थैली इस गढ़े में रख दी और पास पड़े हुए एक पत्थर को ढकेलकर उसके ऊपर रख दिया। थैली बिल्कुल

दब गई ।

दूसरे दिन वेश बदलकर राजा उसी जगह पहुंचा । वह सड़क के किनारे एक ओर खड़ा हो गया । कुछ ही देर बाद एक ग्वाला अपनी गाय-भैंस लिए आया । उसे जोर की ठोकर लगी । बेचारे का पांव बुरी तरह छिल गया । उसने चलते-चलते कहा—"न मालूम किस दुष्ट ने यह पत्थर फेंक दिया है । लोगों को इतनी भी समझ नहीं कि रास्ते में पत्थर नहीं फेंकना चाहिए ।"

थोड़ी ही देर बाद एक गाड़ीवान आ पहुंचा । पत्थर से ठोकर खाकर बैल का पैर रपट गया । गाड़ीवान उसे उठाने तक के लिए ऊपर से नहीं उतरा और यह कहता हुआ आगे बढ़ गया कि "यहां के लोग भी बड़े आलसी हैं । अगर इन रोड़ों को उठा देते तो क्या उनके हाथ घिस जाते ?"

दूसरे दिन राजा की सवारी निकली । घोड़े ने देखा कि रास्ते में बहुत बड़ा पत्थर पड़ा है । वह ठिठक-सा गया किन्तु कोचवान की चाबुक को देखकर फिर चल पड़ा । उसे ठोकर लगी, किन्तु गिरने से बच गया । कोचवान सब कुछ देख रहा था । वह भी यह कहते हुए आगे बढ़ गया कि "राज्य के कुली-मज़दूर मुफ्त में मजदूरी पाते हैं । उनसे रास्ते के पत्थर नहीं हटाए जाते ।"

पत्थर वहीं पड़ा रहा । तीसरे दिन कुछ व्यापारी उस रास्ते से निकले । उनमें से एक को बड़ी जोर से ठोकर लगी । वह गिर पड़ा । उसके सारे कपड़े धूल से भर गए । माथे से लहू बहने लगा । वह भी अपने कपड़ों को झाड़ता-पोंछता उठ खड़ा हुआ । उसके एक साथी ने उसके सिर पर एक साफ रूमाल की पट्टी बांध दी । वे भी आपस में यह कहते हुए चले गये कि "यहां के लोग बहुत आलसी हैं । सरकारी नौकर भी किसी काम के नहीं हैं । किसीको अपने काम का ख्याल नहीं है । किसीका सिर फूटे इनकी बला से ।"

इसी तरह पूरे सात दिन बीत गए । पर पत्थर को किसीने न हटाया । आठवें दिन राजा ने ढिंढोरा पिटवाया कि "आज शाम को एक बड़ी भारी सभा होगी, सब लोग उसमें आएं ।" सभा के लिए स्थान उस गढ़े के पास ही एक

ओर को बनाया गया ।

शाम को वहां खूब भीड़ जमा हो गई। पर किसी को भी यह पता नहीं था कि सभा किसलिए हो रही है। जब राजा चतुरसेन सभा में आए, तो सब उठ खड़े हुए और तालियां बजाने लगे। राजा ने सबको बैठने के लिए कहा। सब बैठ गए और बड़े चाव से राजा की ओर देखने लगे कि क्या कहते हैं?

राजा ने कहा—"प्यारे प्रजाजनो, आपमें से बहुतों ने सड़क पर पड़े हुए उस पत्थर को अवश्य देखा होगा…"

यह सुनना था कि लोग खड़े होकर बड़ी उतावली से कहने लगे—"इससे ठोकर खाकर मेरे पैर का तो अंगूठा ही टूट गया।"

दूसरे ने कहा—"यह देखिए महाराज, मेरे सिर पर अभी तक पट्टी बंधी हुई है। मुझे भी उससे ठोकर लगी थी।"

तीसरे ने कहा—"इससे ठोकर खाकर मेरे बैल की तो टांग ही टूट गई है।"

चौथे ने कहा—"महाराज, इससे मुझे इतने जोर की ठोकर लगी थी कि गिरने से मेरा तो दांत ही टूट गया है।"

एक और बोल पड़ा—"यह सब राज-कर्मचारियों का कसूर है। वे सड़क की देख-भाल नहीं करते। जगह-जगह पत्थर और गढ़े पड़े हुए हैं। न सफाई होती है और न मरम्मत ही। सब मुफ्त की तनख्वाह पाते हैं।"

राजा ने कहा—"जरा ठहरो, पहले मेरी बात सुन लो, फिर अपनी कहना। कितने ही लोगों को ठोकरें लगीं, किसीका सिर फूटा, तो किसीका दांत टूटा। परन्तु तुममें से किसीने भी उसे उठाकर फेंकने का कष्ट न किया। यह पत्थर मैंने यह जानने के लिए रखा था कि मेरे राज्य में कोई सच्चा काम करने वाला भी है या नहीं। इस पत्थर के नीचे मैंने रुपयों की एक थैली भी रख दी थी। यदि कोई इस पत्थर को उठाता तो उसे वह थैली भी मिल जाती। किन्तु बड़े दुःख की बात है कि सच्चा काम करने वाला और प्रजा की सेवा करने वाला

सारे नगर में एक भी न निकला।"

यह सुनते ही सबके सिर शर्म के मारे झुक गए। राजा ने नौकर भेजकर वह थैली मंगवा ली और पत्थर को एक ओर फिंकवा दिया।

सभा से अपने घरों को वापस जाते समय लोगों को सड़क पर पड़े जितने पत्थर नजर आए सब उठा दिए और दूसरे दिन लोगों ने देखा कि राज-कर्मचारी गढ़ों को ठीक कर रहे हैं। उस दिन के बाद सारी प्रजा आलस छोड़कर सबकी भलाई के काम करने लगी। असली रामराज्य तब से आया।

युधिष्ठिर की अग्नि परीक्षा

पाण्डव पांच भाई थे। इनके पिता का नाम पाण्डु था। पाण्डवों में सबसे बड़े युधिष्ठिर सच बोलने के लिए प्रसिद्ध थे।

कौरव जानते थे कि युधिष्ठिर को जुआ खेलने की बुरी लत है। उन्होंने उसे जुआ खेलने के लिए बुलावा भेजा। इस जुए में युधिष्ठिर अपना राजपाट,

धन-धाम सब कुछ हार गए। यहां तक कि उन्होंने द्रौपदी तक को जुए में हार दिया। इस हार के कारण पाण्डवों को तेरह वर्ष के लिए देश निकाला दिया गया।

वे जंगलों में घूम-घूमकर दिन काटने लगे। एक बार सारे देश में सूखा पड़ा। कई दिनों तक वर्षा न हुई। सारे तालाब और झरने सूख गए। पाण्डव एक घने जंगल में घूम रहे थे। सभी को प्यास लगी हुई थी, किन्तु पानी का कहीं नाम-निशान तक न था।

युधिष्ठिर ने पुकारा—"सहदेव, जरा पेड़ पर चढ़कर देखो कहीं आस-पास कोई तालाब, झरना हो तो ? पर इतने घने वृक्षों में तालाब दिखाई न देगा। इसलिए जहां-कहीं हरे-भरे पेड़ों के झुण्ड होंगे, वहां पानी अवश्य होगा। जंगलों में ये हरे-भरे पेड़ ही पानी का पता बताते हैं।"

सुनते ही सहदेव सेम्बल के एक ऊंचे से पेड़ पर चढ़ गया और इधर-उधर देखने लगा। थोड़ी देर बाद उसने आवाज दी और इशारे से बताया कि उस तरफ हरे-भरे पेड़ दिखाई दे रहे हैं और बगुलों के बोलने की आवाज़ भी आ रही है। वहां पानी भी जरूर होगा।

युधिष्ठिर ने कहा—"नीचे उतर आओ। अपना तूणीर ले जाओ और इसे पानी से भर लाओ। पर जरा जल्दी वापस आना। हम सब यहां प्यासे बैठे हैं।"

सहदेव नीचे उतर आया और तूणीर लेकर उन हरे-भरे वृक्षों की तरफ चल पड़ा।

वहां निर्मल जल से भरा हुआ एक तालाब था। उसके किनारे-किनारे दूध की तरह सफेद पंखों वाले और लम्बी टांगों और गर्दनों वाले बगुले ध्यान लगाए खड़े थे।

परन्तु सहदेव के पास कहां समय था कि इन बगुलों को देखता। वह प्यासा था और सामने ठंडा और निर्मल जल देखकर पानी पीने के लिए उतावला था।

उसने तालाब के किनारे घुटने टेककर पानी पीना चाहा। अंजली भरकर पानी उठाया। वह उसे ओठों से लगाने ही वाला था कि इतने में 'ठहरो' की आवाज़ आई। "युवक जरा ठहरो। पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दे लो, पीछे जी-भर पानी पीना। यही यहां का कानून है। अगर कोई इस कानून को तोड़ता है तो उसकी उसी समय मृत्यु हो जाती है।"

सहदेव ने इस आवाज़ की कोई परवाह न की। वह पानो पीने लगा। किन्तु पानी पीते ही अचेत होकर गिर पड़ा।

युधिष्ठिर और दूसरे भाई देर तक उसका रास्ता देखते रहे। आखिर जब वह नहीं लौटा तो युधिष्ठिर ने नकुल को आवाज दी।

"नकुल, पता नहीं सहदेव अब तक क्यों नहीं लौटा। तुम जाओ और जल्दी पानी लेकर आओ।"

जब नकुल तालाब के किनारे पहुंचा तो देखता क्या है कि सहदेव मरा पड़ा है। वह बहुत दुःखित हुआ। परन्तु प्यास के मारे उसका गला सूख रहा था। वह भाई को पड़ा छोड़कर पानी पीने तालाब की ओर बढ़ा

"रुको" एक जोर की आवाज आई। "जब तक तुम मेरे प्रश्नों का उत्तर न दे लो, एक बूंद भी पानी न पीना। अगर पिओगे तो जान से हाथ धो बैठोगे।" नकुल चुप रहा। प्यास के मारे उसके मुंह से बात नहीं निकल रही थी। वह तालाब की ओर बढ़ा और पानी पीने लगा। पानी का पहला घूंट पीते ही वह भी अचेत हो गया।

उधर युधिष्ठिर पानी की आस लगाए बैठे थे। जब नकुल को भी लौटते न देखा तो वे चिन्तित हो उठे।

युधिष्ठिर ने कहा—"अर्जुन, तुम तालाब पर जाओ। वे दोनों अब तक नहीं लौटे। प्यास के मारे मेरा बुरा हाल है। जीभ तालु से लग गई है। जल्दी पानी लाओ।"

अर्जुन बड़ी शीघ्रता से डग भरता हुआ तालाब पर पहुंचा। वहां दोनों

भाइयों को मरा पड़ा देखकर उसके आश्चर्य और दुःख का ठिकाना न रहा। उसने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। पर वहां कोई नहीं था। उसने सोचा, पहले पानी पी लूं। फिर देखता हूं कि क्या मामला है। प्यास से उसका गला सूख गया था। ज्यों ही उसने पानी के लिए हाथ बढ़ाए, जोर की आवाज आई।

"खबरदार! मेरे प्रश्नों का उत्तर दिए बिना तुम पानी नहीं पी सकते। अगर पियोगे तो मारे जाओगे।"

"तुम कौन हो?" अर्जुन ने पूछा। साथ ही आवाज को लक्ष्य करके उसने एक शब्दभेदी बाण मारा। बाण एक वृक्ष में जा लगा। उसे वहां कोई दिखाई न दिया। अर्जुन झुका और फिर पानी पीने लगा। घूंट भरते ही वह भी मूर्च्छित होकर गिर पड़ा।

इधर युधिष्ठिर का प्यास से बुरा हाल था। अर्जुन को भी लौटता न देखकर उनकी चिन्ता बढ़ने लगी। उन्होंने भीम को बुलाया और कहा—"भाई, अब तुम ही जाओ और पानी लाओ। आश्चर्य तो इस बात का है कि उन तीनों में से अब तक एक भी नहीं लौटा। देखो कि वे तीनों कहीं जंगल में रास्ता तो नहीं भूल गए।"

भीम भी प्यासा और थका तालाब पर पहुंचा। तीनों भाइयों को मरा पड़ा देख उसे बहुत दुःख हुआ। प्यास उसे और भी बेजान किए जा रही थी! प्यास की अधिकता के कारण उसका मुंह खुल गया था। आंखों के आगे अँधेरा छा रहा था।

"पानी मत पीना," जोर की आवाज आई। "तब तक पानी को मुंह न लगाना, जब तक मेरे प्रश्नों का उत्तर न दे लो। नहीं तो पीते ही तुम्हारी भी यही दशा होगी।"

परन्तु भीम ने उसकी एक न सुनी और पानी पीते ही वह भी बाकी तीनों भाइयों की तरह अचेत होकर गिर पड़ा।

जंगल में सन्नाटा छाया हुआ था। कभी-कभी सूखे पत्तों पर किसी जंगली

जानवर के चलने से 'मर्मर' की आवाज सुनाई देती थी। या कभी कोई प्यासी चिड़िया चीं-चीं कर उठती थी।

लम्बी प्रतीक्षा के बाद युधिष्ठिर स्वयं उठे और तालाब की ओर चल पड़े। युधिष्ठिर ने जब वहां चारों भाइयों को मरा पड़ा देखा, तो आंखों के आगे अँधेरा छा गया। उसने चारों ओर देखा कि आखिर इन्हें मारने वाला है कौन? किन्तु कुछ दिखाई न देने पर, वह भी पानी पीने के लिए तालाब की ओर बढ़ा।

"ठहरो," एक जोर की आवाज सुनाई दी। "पहले मेरे प्रश्नों का उत्तर दो, पीछे पानी पीना। यही यहां का नियम है। अगर इसे तोड़ोगे तो उसी समय मर जाओगे। मैं बूढ़ा बगुला हूं। मैंने ही तुम्हारे इन चारों भाइयों को मारा है। इन सबने मेरी बात नहीं मानी और अब उसका फल भुगत रहे हैं। इसलिए तुम्हें भी सावधान किए देता हूं।"

"नहीं, तुम बगुला नहीं हो।" युधिष्ठिर ने उत्तर दिया। "भला बगुले में इतनी शक्ति कहां कि वह इन्हें मार सकता। तुम अवश्य ही कोई महान् शक्ति हो।"

"हां तुम ठीक कह रहे हो।" फिर आवाज आई। "मैं इस जंगल का देवता यक्ष हूं। मैंने तुम्हें खबरदार कर दिया है। देखना अभी पानी मत पीना।"

युधिष्ठिर ने कहा—"पूछो, क्या पूछते हो?"

तब यक्ष ने नीचे लिखे प्रश्न पूछे और युधिष्ठिर ने उनका उत्तर दिया।

यक्ष—स्वर्ग जाने का सबसे उत्तम मार्ग कौन-सा है।

युधिष्ठिर—सदाचार ही स्वर्ग जाने का सबसे उत्तम मार्ग है।

यक्ष—कौन-सा सदाचार सबसे अच्छा है?

युधिष्ठिर—किसीसे वृणा न करना ही सबसे अच्छा सदाचार है।

यक्ष—मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु कौन है?

युधिष्ठिर—क्रोध ही मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है।

यक्ष—एक आदमी, एक ही समय में अमीर भी और गरीब भा कैसे हो

सकता है ?

युधिष्ठिर—जो अमीर होने पर भी किसी को कुछ दान नहीं देता। वह अमीर भी और गरीब भी।

यक्ष—गरीब आदमी अमीर कैसे बन सकता है ?

युधिष्ठिर—सन्तोष गरीब आदमी को भी अमीर बना देता है।

यक्ष—पृथ्वी से बड़ा और बादलों से भी ऊंचा क्या है ?

युधिष्ठिर—माता-पिता का प्यार।

यक्ष—सदा प्रसन्न रहने का क्या उपाय है ?

युधिष्ठिर—सच बोलो और दयालु बनो।

यक्ष—संसार भर में सबसे बड़ा आदमी कौन है ?

युधिष्ठिर—जो सुख और दुःख में एक-सा रहे।

तब यक्ष ने कहा—"मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूं। तुमने मेरे प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर दिया है। अब तुम जी भरकर पानी पी सकते हो। मैं तुम्हें एक वर देता हूं। अपने इन मृत भाइयों में से तुम किसी एक को जिला सकते हो।"

युधिष्ठिर बोले—"तो फिर माद्री-पुत्र नकुल को जिला दो। तुम्हारी बड़ी कृपा होगी।"

"परन्तु नकुल तो तुम्हारा सौतेला भाई है।" यक्ष ने उत्तर दिया। "तुम अपने सगे भाइयों में से किसी एक को क्यों नहीं जिला लेते। भीम और अर्जुन में से किसी एक को जिला लो। क्या वे तुम्हें प्यारे नहीं हैं ?"

"प्यारे क्यों नहीं हैं ?" युधिष्ठिर ने कहा। "परन्तु मैं चाहता हूं कि नकुल जीवित हो जाए।"

"आखिर क्यों ?"

इसलिए कि वह माद्री का पुत्र है और मैं कुन्ती का। तेरह साल भटकने के बाद जब हम घर लौटेंगे तो दोनों माताएं हमारा स्वागत करने आएंगी। वे पांच में से केवल हम दो को देखेंगी और यदि माद्री देखेगी कि दोनों कुन्ती

के पुत्र हैं और उसके दोनों पुत्र मर गए तो उसका दिल टूट जाएगा। हे यक्ष ! दोनों माताओं का दिल न दुःखे और वे अपना एक-एक पुत्र पाकर सुखी रहें। इसलिए नकुल को जिला दो।

यक्ष ने कहा—"ऐ युधिष्ठिर ! मैं न्याय का देवता धर्म हूं। मैं देखना चाहता था कि तुम कितने धर्मात्मा हो। मैंने तुम्हारी परीक्षा ली और वास्तव में तुम्हें धर्मात्मा पाया। मैं तुम्हारी न्यायप्रियता से बहुत प्रसन्न हूं। इसलिए तुम्हारे चारों भाइयों को जीवित करता हूं और ये चारों भाई जीवित हो गए।

बड़ा कौन ?

वाराणसी में एक बड़ा धर्मात्मा राजा राज्य करता था। उसकी सारी प्रजा सुखी थी। राजा अपनी सन्तान की तरह प्रजा का ध्यान रखता था। उसके राज्य में न तो कोई भूखा-नंगा था और न ही दीन-दुःखी। न कोई झूठ बोलता था और न कोई चोरी करता था। सारी प्रजा आपस में बड़े प्रेम से रहती थी। कचहरियों में कोई मुकदमा नहीं आता था। इसलिए वे बन्द कर दी गई थीं।

राजा प्रजा से कर भी वसूल नहीं करता था। सारी प्रजा सुख-चैन से जीवन बिता रही थी।

राजा के पास प्रजा का शासन करने जैसा कोई काम नहीं था। राजा ने सोचा, "मेरी प्रजा सुखी है। अब मुझे अपने चरित्र को सुधारने का काम करना चाहिए।"

पर सच तो यह है कि राजा का चरित्र बड़ा ऊंचा था। उसमें ढूंढने पर भी कोई दोष दिखाई नहीं देता था।

राजा ने सोचा, "किसीको भी अपने दोष दिखाई नहीं देते हैं। हां, दूसरों में लोग दोष जरूर ढूंढ लेते हैं, इसलिए किसी दूसरे से पूछकर ही मुझे अपने दोषों का पता लगाना चाहिए।

राजा ने मंत्रियों को बुलाकर कहा, "मैं अपने चरित्र का सुधार करना चाहता हूं। इसलिए आप मुझे बताइए कि मुझमें कौन-कौन से दोष-दुर्गुण हैं ताकि मैं उन्हें दूर कर सकूं।"

मंत्रियों ने कहा, "महाराज! हमें तो आप में कोई दोष-दुर्गुण दिखाई नहीं देता। बताएं तो, बताएं क्या!"

मंत्री तो अपने राजा के गुणों की ही प्रशंसा करने लगे। राजा ने मन में सोचा, "मेरे मंत्री भला मेरे दोष क्यों बताने लगे। मित्र और सम्बन्धी भी मुझे मेरे दोष नहीं बताएंगे। यदि मैं अपने आस-पास के लोगों से पूछकर ही सन्तुष्ट हो जाऊंगा तो काम बनने का नहीं। दोष बताना तो दूर रहा, लोग उल्टे बड़ाई करने लगते हैं। क्यों न नगर के लोगों से पूछूं, शायद उनमें कोई दोष बताने वाला मिल जाए। परन्तु यहां भी निराशा ही पल्ले पड़ी। अब राजा राजधानी के आस-पास घूमने लगा। सभी से पूछता कि मुझमें जो दोष-दुर्गुण दिखाई दें, उसे कहो। पर वहां भी किसीने कुछ नहीं कहा। राजमहल, राजधानी और आस-पास कोई भी ऐसा न मिला, जो कुछ दोष-दुर्गुण बताता।

राजा ने सोचा—अब कहीं दूर जाकर लोगों से पूछूंगा। राज-काज वज़ीरों

को सौंपकर, वह रथ पर चढ़ा और अपने दोष-दुर्गुण खोजने चल पड़ा। एक सारथी साथ ले, वेश बदलकर वह अपनी राजधानी से बाहर निकला। खोज करते-करते वह अपने राज की सीमा तक जा पहुंचा। इससे आगे दूसरे राजा की सीमा शुरू होती थी।

इन्हीं दिनों कोशल का राजा मल्लिक भी अपने दोष-दुर्गुण खोजने के लिए जहां-तहां घूम रहा था। संयोग की बात कि वह भी उसी स्थान पर आ पहुंचा। एक ओर से वाराणसी के राजा का रथ आ रहा था, दूसरी ओर से कोशल के राजा का। सड़क इतनी तंग थी कि दोनों रथ एक साथ गुजर नहीं सकते थे। दोनों के रथवानों ने आमने-सामने पहुंचने पर अपने-अपने रथ रोक लिए।

कोशल के राजा के रथवान ने वाराणसी के राजा के रथवान को कहा—"तुम अपना रथ लौटा लो और हमें निकल जाने दो।"

वाराणसी के राजा के रथवान ने कहा—"मैं क्यों अपना रथ लौटाऊं। तुम्हीं अपना रथ लौटाओ। जानते नहीं हो मेरे रथ में वाराणसी के राजा बैठे हुए हैं।"

दूसरे ने कहा—"इस रथ में भी तो कोशल के राजा बैठे हुए हैं।"

वाराणसी के राजा के रथवान ने सोचा—यह भी राजा, वह भी राजा। अब क्या करना चाहिए। उसे एक उपाय सूझा। जो उम्र में बड़ा हो, उसके लिए रास्ता छोड़ दिया जाए। उसने उस से पूछा—"तुम्हारे राजा की उम्र कितनी है?"

मिलान करने पर दोनों की उम्र एक जितनी निकली। फिर सोचा कि अच्छा जिसका राज्य बड़ा हो, जिसके पास ज्यादा फौज हो या फिर जिसका वंश ऊंचा हो—उसीको निकल जाने दिया जाए। पर मिलाने पर मालूम हुआ कि दोनों के राज्य, फौज और वंश एक ही समान हैं। तब सोचा कि जो अच्छे चाल-चलन वाला होगा, उसके लिए रास्ता छोड़ दिया जाएगा। उसने दूसरे रथवान से पूछा—"कहो भाई, तुम्हारे राजा का चाल-चलन कैसा है?"

उसने अपने राजा के गुणों को बताते हुए कहा—

"हमारे राजा का व्यवहार सख्त स्वभाव वाले के साथ सख्त और नरम स्वभाव वाले के साथ नरम होता है। भले आदमी को भलाई से जीतता है और बुरे को बुराई से। जैसा आदमी उसके साथ वैसा ही व्यवहार!"

यह सुनकर वाराणसी के राजा के सारथी ने पूछा—"क्या तुमने अपने राजा के गुण कह लिए। कुछ कहना बाकी हो तो वह भी कह दो।"

"हां, कह दिए। मुझे और कुछ नहीं कहना है।"

"अगर यही गुण हैं, तो फिर अवगुण कैसे होते हैं?"

"तुम उन्हें अवगुण समझते हो? खैर, कोई बात नहीं। अच्छा, अब तुम बताओ तुम्हारे राजा में कौन-से गुण हैं?"

लो सुनो—

हमारा राजा गुस्से वाले को शान्ति से, बुरे को भलाई से, कंजूस को दान से और झूठ को सच से जीतता है। इसलिए ऐ रथवान! तू रास्ता छोड़ दे और हमारे राजा के रथ को निकल जाने दे।"

यह सुना तो कोशल के राजा के रथवान ने उतरकर घोड़ों को खोला, रथ को हटाया और वाराणसी के राजा को रास्ता दे दिया।

सदाचार की परीक्षा

पुराने ज़माने में बनारस में एक बड़े विद्वान् पंडित रहते थे। पांच सौ तो उनके चेले ही थे। इन पंडितजी की एक जवान कन्या थी। एक दिन बैठे-बैठे सोचने लगे, क्यों न किसी सदाचारी चेले से ही इसका विवाह कर दिया जाए। अब उन्हें यह देखना था कि कौन-सा चेला आचरण में सबसे उत्तम है।

एक दिन सारे चेलों को बुलाकर कहने लगे कि मेरी लड़की की अवस्था विवाह योग्य हो गई है। मैं जल्दी ही उसका विवाह करना चाहता हूं। इसलिए तुम अपने घर वालों की आंख बचाकर बढ़िया-बढ़िया कपड़े और गहने

ले आओ। पर इस बात का ख्याल रखना कि कोई देख न ले अगर किसी ने देख लिया तो फिर मैं उन्हें नहीं लूंगा।

सभी चेले 'अच्छा' कहकर अपने-अपने घर गए और घर वालों की आंख बचाकर गहने-कपड़े लाने लगे। पंडितजी के पास गहनों-कपड़ों का अच्छा-खासा ढेर लग गया। जो कुछ भी कोई लाता, पंडित जी उसे अलग-अलग रखते जाते।

पांच सौ में से एक को छोड़कर बाकी सारे कुछ न कुछ चुरा लाए। जो चेला कुछ नहीं लाया था, पंडितजी ने उसे बुलाकर पूछा—"तुम कुछ नहीं लाए ?"

"जी, मैं कुछ नहीं ला सका।"

"क्यों"

"आपने कहा था कि सबकी आंख बचाकर लाना। जहां और कोई नहीं देखता था, वहां भी आखिर मैं तो होता ही था। और फिर भगवान तो सब कुछ देखता ही है। उससे कौन-सी जगह छिपी हुई है। उसकी आंख बचाकर कैसे कुछ लाया जा सकता है ?"

पंडितजी इस चेले पर बहुत खुश हुए। कहने लगे—"बेटा, मेरे पास गहने-कपड़े की कोई कमी थोड़े ही है। मैंने तो केवल यह जानने के लिए कि कौन सबसे अच्छे चालचलन वाला है, ऐसा किया था। इस परीक्षा में तुम पास हुए और बाकी सब फेल। मेरी लड़की तुम्हारे ही योग्य है।

पंडितजी ने लड़की का विवाह उस चेले से कर दिया और बाकी चेलों से कहा—"तुम जो कुछ लाए हो, उसे वापस अपने घर ले जाओ। मुझे जिसकी खोज थी वह मिल गया।"

लेखक की अन्य पुस्तकें

१. **मानव धर्म की कहानियां** ३.५०

सद्‌गुणों के विकास की प्रेरणा देने वाली मनोरंजक कहानियां। इसमें पुराण, इतिहास तथा लोक साहित्य की चुनी हुई कहानियां संगृहीत हैं।

२. **सदाचार की कहानियां** ३.००

सदाचार की प्रेरणा देने वाली सुरुचिपूर्ण सचित्र कहानियां।

३. **सीख की कहानियां** २.५०

इसमें छोटी-छोटी किन्तु गहरा प्रभाव डालने वाली मनोरंजक तथा शिक्षापूर्ण सचित्र कहानियां संगृहीत हैं।

४. **लोक-व्यवहार** २.००

शिष्टाचार की शिक्षा देने वाली महत्त्वपूर्ण पुस्तक।

५. **मेरा देश है यह** (पुरस्कृत) २.००

विविधता में एकता के दर्शन कराने वाली सचित्र पुस्तक।